श्री भारतवर्षीय दिगंबर जैन (धर्म संरक्षिणी) महासभा की 125वीं वर्षगांठ के उपलक्ष्य में आयोजित समारोह में भाषण

----

4 जनवरी, 2020

जैन जन उपयोगी भवन, कोटा

आज कोटा में श्री भारतवर्षीय दिगंबर जैन (धर्म संरक्षिणी) महासभा की 125वीं वर्षगांठ के उपलक्ष्य में आयोजित किए जा रहे समारोह में शामिल होना मेरे लिए बड़े सौभाग्य की बात है।

सबसे पहले, मैं आप सबको धन्यवाद देना चाहता हूँ कि आपने मुझे इस समारोह में शामिल होने के लिए आमंत्रित किया। समाज के विभिन्न क्षेत्रों में किए गए आपके योगदान के लिए मैं आप सबको बधाई देता हूँ।

अपने 125 साल के इतिहास के दौरान, श्री भारतवर्षीय दिगंबर जैन (धर्म संरक्षिणी) महासभा ने लोगों को जोड़कर प्राचीन धर्म, संस्कृति और परम्पराओं के संरक्षण के संदर्भ में सार्थक संवाद के लिए मंच प्रदान किया है।

यह महासभा समाज में अपेक्षित बदलाव लाकर समाज की सेवा करती आई है। यह वास्तव में सराहनीय है कि जैनियों की सबसे पुरानी यह महासभा अपने स्थापना काल से ही एक शताब्दी से भी अधिक समय से हमारे समाज के वंचित वर्गों के लोगों के उत्थान में लगी हुई है। साथ ही प्राचीन धर्म, संस्कृति और परंपरा के संरक्षण के लिए अथक प्रयास करती आई है।

इस ऐतिहासिक अवसर पर मैं उन सब लोगों को भी बधाई देता हूँ जो वर्तमान में अथवा पूर्व में भी इस महासभा के साथ जुड़े रहे हैं।

भारत अध्यात्म के साथ-साथ हमेशा से ही शांति और मानवता के प्रति प्रेम का केंद्र रहा है। वेदों और उपनिषदों जैसे हमारे प्राचीन धर्मग्रंथों में भी आध्यात्मिकता और विश्व शांति की बात कही गई है। हमारे जनमानस और संस्कृति में *वसुधैव कुटुंबकम* अर्थात 'पूरा विश्व हमारा परिवार है' की सर्वव्यापी भावना निहित रही है।

इतिहास में झांकने की कोशिश करें, तो हम पाते हैं कि जैन धर्म अत्यंत प्राचीन धर्म है। छठी शताब्दी ईसा पूर्व में विकसित होने के कारण इसे बौद्ध धर्म के समकालीन माना जाता है।

जैन मत की स्थापना के सिलसिले में 24 तीर्थंकरों की एक लंबी परंपरा का वर्णन किया जाता है। ऋषभदेव प्रथम तीर्थंकर थे। महावीर अंतिम तीर्थंकर थे।

दरअसल तीर्थंकर उन्हें कहा जाता है, जो मुक्त हैं। इन्होंने अपने प्रयत्नों के बल पर बन्धन को त्यागकर मोक्ष को अंगीकार किया है। जैन परंपरा में तीर्थंकर को आदरणीय पुरूष कहा जाता है। इनके बताए हुए मार्ग पर चलकर मानव बंधन से मुक्त हो सकता है।

जैन तीर्थंकर परंपरा से ही जैन दर्शन का विकास हुआ है। चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर के समय से जैन मत का विकास और प्रचारप्रसार हुआ और जैन धर्म पुष्पित और पल्लवित- हुआ है।

जैन धर्म की दिगंबर परंपरा में किसी भी वस्तु के संग्रह को वर्जित माना गया है। जैन धर्म में अहिंसा पर सर्वाधिक जोर दिया गया है। जैन धर्म की मान्यताएं दरअसल इतनी व्यापक और विशाल हैं कि यह जीव और जड दोनों की सत्ता को स्थापित करता है।

जैन धर्म की मान्यताएं कितनी विशाल हैं, इसका अंदाजा इस बात से लगा सकते हैं कि जैन धर्म में मान्यता है कि जीव का निवास केवल मनुष्यों, पशुओं और पेड पौधों में ही नहीं है बल्कि धातुओं और पत्थरों जैसे पदार्थों में भी निहित है।

जैन परंपरा कहती है कि वस्तु के अनेक धर्म या गुण है और इनकी पूर्ण जानकारी सामान्य मानव के लिए असंभव है। मानवीय ज्ञान की सीमाएं हैं। कोई भी मनुष्य वस्तु के सारे गुणों की जानकारी नहीं पा सकता है। वह वस्तु के आंशिक गुणों को ही समझने में सक्षम है। वस्तु के अनंत गुणों का ज्ञान, मुक्त व्यक्ति के द्वारा ही संभव है। इसे स्यादवाद कहते हैं।

यहां हाथी और छह दृष्टिबाधित व्यक्तियों के दृष्टांत को समझना जरूरी है। छह दृष्टिबाधित व्यक्ति हाथी के आकार का ज्ञान जानने के उद्देश्य से हाथी के अंगों का स्पर्श करते हैं। जो अपने हाथों को हाथी के शरीर के जिस भाग पर रखता है, वह उसी भाग को पूरा हाथी समझ लेता है। जो दृष्टिबाधित व्यक्ति हाथी के पैर पकड़ता है वह हाथी को खंभे जैसा समझता है। जो हाथी के सूंढ को स्पर्श करता है वह हाथी को अजगर जैसा बतलाता है। जो हाथी के पूंछ को छूता है वह हाथी को रस्सी जैसा बतलाता है। जो हाथी के पेट को छूता है, वह हाथी को दीवार जैसा बतलाता है। जो हाथी के कान को छूता है, वह हाथी को पंखे जैसा बतलाता है।

प्रत्येक दृष्टिबाधित व्यक्ति यही सोचता है कि वह सत्य कह रहा है और दूसरे गलत हैं। परंतु पूर्णता में देखा जाए तो उन सभी दृष्टिबाधित व्यक्तियों का ज्ञान गलत हैं, क्योंकि सबों ने हाथी के एकएक अंग को स्पर्श किया है।-

विभिन्न दर्शनों में जो मतभेद पाया जाता है, उसका कारण भी यही है कि प्रत्येक दर्शन अपने दृष्टिकोण को ठीक मानता है और दूसरे के दृष्टिकोण को मिथ्या बतलाकर उपेक्षा करता है। यदि प्रत्येक धर्म दर्शन में सोचा जाए कि उसका मत किसी दृष्टि विशेष पर निर्भर है तो मतभेद होने की संभावना खत्म हो जाती है।

जैन धर्म की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि उन्होंने इस बात को न सिर्फ समझा है बल्कि यह उनके धर्म दर्शन के ही एक सिद्धांत के रूप में रेखांकित किया गया है।

दूसरी बात है कि जैन धर्म में मोक्ष के मार्ग के लिए तीन रत्न बताए गए सम्यक् दर्शन -, सम्यक् ज्ञान और सम्यक् आचरण। विभिन्न धर्मदर्शनों में इन तीनों मार्गों में से किसी-न-किसी एक मार्ग को आवश्यक माना गया है। पर जैन मान्यताओं की विशेषता है कि उन्होंने तीनों मार्गों का समन्वयन किया है।

इसके लिए किसी रोगी व्यक्ति की बडी अच्छी उपमा है कि एक रोगग्रस्त व्यक्ति जो रोग से मुक्त होना चाहता है। उसे चिकित्सक के प्रति आस्था रखनी चाहिए, उसके द्वारा दी गई दवाओं का ज्ञान होना चाहिए और चिकित्सकों के

मतानुसार आचरण भी करना चाहिए। इस प्रकार सफलता के लिए सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान और सम्यक् चरित्र का सम्मिलित प्रयोग आवश्यक है।

सत्य के प्रति श्रद्धा की भावना रखना सम्यक् दर्शन है। सम्यक् ज्ञान उस ज्ञान को कहा जाता है, जिसके द्वारा जीव और अजीव के मूल तत्वों का पूर्ण ज्ञान होता है। और तीसरा, हितकर कार्यों का आचरण और अहितकर कार्यों का त्याग ही सम्यक् चरित्र कहलाता है।

अत:, मोक्ष के लिए तीर्थंकरों के प्रति श्रद्धा तथा सत्य का ज्ञान ही पर्याप्त नहीं है, बल्कि अपने आचरण का संयम भी अत्यन्त आवश्यक है। सम्यक् चरित्र व्यक्ति को मन, वचन और कर्म पर नियंत्रण करने का निर्देश देता है। जैन मत के अनुसार सम्यक् चरित्र के पालन से जीव अपने कर्मों से मुक्त हो जाता है।

कर्म के द्वारा ही मानव दु:ख और बंधन का सामना करता है। अत: कर्मों से मुक्ति पाने का अर्थ है, बंधन और दु:ख से छुटकारा पाना। मोक्ष मार्ग में सबसे महत्वपूर्ण चीज सम्यक् चरित्र ही कही जा सकती है।

इसमें मन, वचन और शारीरिक कर्मों का संयम बहुत जरूरी है। जैन धर्म में दस प्रकार के धर्मों का पालन करना बताया गया है। सत्य, क्षमा, शुद्धता, तप, संयम, त्याग, विरक्ति, नम्रता, सरलता और ब्रह्मचर्य यही दस प्रकार के धर्म हैं।

सम्यक चरित्र के लिए पंच महाव्रत का पालन करना आवश्यक माना गया है। ये पांच महाव्रत हैं – अहिंसा, सत्य, अस्तेय अर्थात् चोरी का निषेध, अपरिग्रह यानि संग्रह और विषयों की आसक्ति का त्याग एवं पांचवां आवश्यक महाव्रत है ब्रह्मचर्य यानि वासनाओं का त्याग। इन कर्मों को अपनाकर जीव अपनी स्वाभाविक अवस्था को प्राप्त हो जाता है। यही मोक्ष है।

साथियो, सत्य और अहिंसा में विश्वास रखना भारतीय सभ्यता और संस्कृति का शाश्वत चिंतन है। 'अहिंसा परमो धर्म', भारतीय संस्कृति का मूल तत्व है। यह तत्व हमारे देश की मिट्टी में ही रचा बसा है। यह हमें बचपन से ही एक संस्कार के रूप में मिलता है। भारतीय मनीषियों ने इस 'अहिंसा परमो धर्म' के तत्व के लिए बड़े त्याग और तपस्याएं की हैं। भगवान महावीर ने कहा था कि सभी जीवित प्राणियों के प्रति सम्मान ही अहिंसा है और अहिंसा शक्तिशाली लोगों की पहचान है।

भगवान महावीर का उपदेश था 'जियो और जीने दो'। उन्होंने यह स्पष्ट संदेश दिया था कि जीव हिंसा की भी अनुमति नहीं दी जा सकती क्योंकि उसमें भी वही प्राण है, जो हममें है। सभी जीवों के प्रति दयालुता का संदेश उनका मूल संदेश था। अहिंसा के प्रति उनका यह आग्रह ही जैन धर्म के मूल में है।

हिंसा से शांति संभव नहीं। जब कभी भी अहिंसा पर चर्चा होती है तो सदैव यही ख्याल आता है कि हमें मन, वचन और कर्म से भी अहिंसक होना आवश्यक है। शांति मन के अंदर से उपजने वाली भावना है। इसलिए पहले प्रयास यह करना होगा कि किस प्रकार मनुष्य का मन शांत हो। इसके लिए ज्ञानामृत का पान करने की आवश्यकता है।

हम सबको, विशेष रूप से हमारे युवा वर्ग को यह समझना चाहिए कि आर्थिक विकास का मूल आधार भी शांति ही है। यदि हमें आर्थिक और राजनीतिक महाशक्ति बनना है तो निश्चय ही इस विशाल एवं अपार युवाशक्ति का सकारात्मक उपयोग किया जाना चाहिए।

भारत का मूलभूत गुण इसकी एकता, सहनशीलता और धार्मिक सद्भावना रही है। विभिन्न धर्मों के अनुयायियों को यह याद रखना चाहिए कि किसी भी धर्म की नींव घृणा और हिंसा पर नहीं रखी गई।

हम यहां पर राष्ट्रपिता महात्मा गांधी को भी याद कर सकते हैं। उन्होंने भारत की स्वतंत्रता की बुनियाद ही सत्य और अहिंसा के सिद्धांत पर रखी थी। इसी सिद्धांत पर उन्होंने संपूर्ण स्वतंत्रता संग्राम को संचालित किया था। यह अहिंसा का एक अभिनव प्रयोग था। हम कह सकते है कि गांधी जी के जीवन एवं दर्शन पर जैन आचार्यों के अहिंसा के विचारों का बडा प्रभाव था।

श्री भारतवर्षीय दिगंबर जैन (धर्म संरक्षिणी) महासभा इन समृद्ध जैन मान्यताओं, परम्पराओं और दर्शन की विरासत को आगे बढ़ाने में बहुत सराहनीय भूमिका निभा रही है । पूरी दुनिया में जैन धर्म की पावन मान्यताओं और सिद्धांतों के प्रचार-प्रसार और इनके संरक्षण में महासभा का योगदान विशेष रूप से प्रशंसनीय रहा है।

मित्रो, जैन दर्शन की सबसे बड़ी विशेषता और इसका सबसे बड़ा गुण यह है कि इसमें अहिंसा और सत्य के बहुमुखी पहलुओं, नैतिकता और सदाचार पर बल दिया जाता है। जैन धर्म ने भारतीय संस्कृति के विभिन्न क्षेत्रों में व्यापक योगदान दिया है।

जैन धर्म ने हमारे देश में भाषा और विशेष रूप से देशी भाषा के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। हमारे इतिहास में ब्राह्मणों और बौद्धों के लिए लेखन और शिक्षा-दीक्षा का माध्यम संस्कृत और पाली भाषा थी। परंतु प्रारंभ में जैन धर्म का प्रचार-प्रसार आमजनों की भाषा में होता था और इसके दार्शनिक साहित्य प्राकृत भाषा में लिखे गए थे। इस प्रकार जैन धर्म ने भारतीय भाषाओं और साहित्य को बहुत समृद्ध किया है।

जैन धर्म में वर्ण व्यवस्था की बुराई को दूर करने के प्रयास किए गए। जैन धर्म में जाति के आधार पर भेदभाव किए बिना सभी जातियों के लोगों के साथ समान व्यवहार किया जाता था।

जैन धर्म के उपदेशों में न केवल अहिंसा पर बल दिया जाता है बल्कि मानवता की सेवा पर भी बल दिया जाता है जिसके परिणामस्वरूप हमें अपने आस-पास इतने सारे अस्पताल, स्कूल और लोक हित के अन्य संस्थान दिखाई देते हैं जिनकी स्थापना और प्रबंधन जैन धर्म के लोगों द्वारा किया जा रहा है। उनके जनहित के कार्यों से सभी की भलाई के लिए जन सेवा किए जाने और लोकोपकारी कार्य किए जाने की भावना को बढ़ावा मिलता है।

जैन धर्म ने हमारे देश में कला, वास्तुकला और मूर्तिकला पर अपनी गहरी छाप छोड़ी है । उनकी यह विशेषता उनके द्वारा तैयार किए गए चित्रों और गुफाओं में की गई चित्रकारी के अलावा स्तूपों में पत्थर की रेलिंग, सजे हुए द्वारों, पत्थर की छतरियों, स्तंभों और अपने संतों के सम्मान में निर्मित मूर्तियों में दिखाई देती है। इस सबसे कला और वास्तुकला के क्षेत्र में उनकी उत्कृष्टता का परिचय मिलता है। उदाहरण के लिए राजस्थान में माउंट आबू में ग्यारहवीं शताब्दी में निर्मित जैन मंदिर वास्तव में बहुत सुंदर और दर्शनीय है।

हमारे देश में जनजीवन अध्यात्म और तर्क से बहुत प्रभावित रहा है। हमारे देश की नींव एक ऐसी सभ्यता ने रखी जो मूलतः आध्यात्मिक एवं तर्कशील थी। इसी कारण हमारे देश में सभी प्रकार के विचारों, मान्यताओं और परंपराओं के विकसित होने और फलने-फूलने का पूरा अवसर मिला है। इसी कारण से यहां कालांतर में नई-नई धारणाएँ जुड़ती गईं और इसका दर्शन गहरा होता गया।

हमारा भारत कई धर्मों की उद्गमस्थली रहा है। ऐसा इसलिए कि यहां पर सभी व्यक्ति को अपने मत एवं पंथ के मुताबिक जीवन जीने का अवसर सुलभ कराया जाता रहा है। इसलिए, यहां पर बौद्धिक और आध्यात्मिक स्तर पर कई क्रांतिकारी बदलाव हुए हैं।

कई आंदोलन हुए हैं लेकिन उन सबके बावजूद हमारी युगों पुरानी आध्यात्मिक सांस्कृतिक चेतना अभी भी अपने मूल स्वरूप में विद्यमान हैं और जैन धर्म का दर्शन भी हमारे इसी आध्यात्मिक सांस्कृतिक चेतना का एक अटूट हिस्सा है।

मुझे यह जानकर खुशी हुई है कि श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन (धर्म संरक्षिणी) महासभा दिगंबर जैनियों के बीच धार्मिक और अन्य मान्यताओं के प्रचार-प्रसार करने, जैन मूर्तियों के संरक्षण, लोगों को सद्गुणों की शिक्षा देने जैसी अनेक गतिविधियों और अनेक परोपकारी कार्यों में संलग्न है।

मित्रो, यह सराहनीय है कि महासभा ने अपने साथ जुड़े लोगों और विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत अन्य सामाजिक कार्यकर्ताओं द्वारा किए जा रहे प्रयासों का सम्मान करने की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया है।

मैं समाज के उत्थान के लिए सुविज्ञ और सुविख्यात विद्वानों, समर्पित कार्यकर्ताओं और उदार व्यक्तियों द्वारा किए गए योगदान के लिए उनका अभिनंदन और सम्मान करने की श्री भारतवर्षीय दिगंबर जैन (धर्म संरक्षिणी) महासभा द्वारा की गई दूरगामी पहल की सराहना करता हूँ।

मुझे इस समारोह में शामिल होने का अवसर देने के लिए मैं एक बार फिर से श्री निर्मल कुमार जैन जी और अन्य सदस्यगणों के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ। मैं इस समारोह के आयोजकों और इससे संबद्ध सभी व्यक्तियों के अथक प्रयासों के लिए उनकी सराहना करता हूँ।

इस स्मरणीय अवसर पर, मैं आप सभी को शुभकामनाएं देता हूँ और आशा करता हूँ कि आप सामाजिक-आर्थिकसेवाओं, शिक्षा, विरासत और संस्कृति के संरक्षण आदि क्षेत्रों में समाज में योगदान देने वाले महान व्यक्तियों का सम्मान करते रहेंगे। मैं आप सभी के भावी प्रयासों में सफलता की कामना करता हूँ और अपनी शुभकामनाएं देता हूँ ।